[1987] 3 उम० नि० प० 56

बिहार लीगल सपोर्ट सोसायटी—(अपने अध्यक्ष की मार्फत)
(सी-761 लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली)

बनाम

भारत के मुख्य न्यायमूर्ति

19 नवंबर, 1986

मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती, न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र, वी० खालिद,
जी० एल० ओझा और एम० एम० दत्त

संविधान, 1950—अनुच्छेद 136 और 32—विशेष इजाजत याचिका—लोक हितार्थ मुकदमे—उद्देश्य—"निर्धन लोगों" को अपनी विशेष इजाजत याचिका पर विचार करवाने का उतना ही अधिकार है जितना बड़े-बड़े उद्योगपतियों को—उच्चतम न्यायालय ने लोक हितार्थ मुकदमों की रणनीति इसी उद्देश्य से विकसित की है जिससे कि न्याय समुदाय के निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों की पहुंच के भीतर भी आ सके।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 136 और 32—जमानत—विशेष इजाजत याचिका—यह कि क्या जमानत संबंधी विशेष इजाजत याचिका को तुरंत सूचीबद्ध किया जाए या नहीं, मुख्य न्यायमूर्ति की प्रशासनिक अधिकारिता के भीतर है—किंतु रिट याचिका में उच्चतम न्यायालय उस संबंध में ऐसा निदेश नहीं दे सकता—उच्चतम न्यायालय को जमानत या अग्रिम जमानत मंजूर करने या उससे इनकार करने के मामले में मामूली तौर से हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

यह रिट याचिका बिहार लीगल सपोर्ट सोसायटी द्वारा फाइल की गई है जो कि

रजिस्ट्रीकृत सोसायटी है, और जिसका अपना मुख्य लक्ष्य और उद्देश्य समुदाय के निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित वर्गों को विधिक सहायता देने की व्यवस्था करना है जिससे कि विधि की प्रक्रिया के माध्यम से अपने सांविधानिक और विधिक अधिकारों की लड़ाई में उनकी सहायता की जा सके। उल्लेखनीय है कि उच्चतम न्यायालय की न्यायपीठ दो बड़े-बड़े लोगों की जमानत संबंधी आवेदन पर विचार करने के लिए 5 सितंबर, 1985 की रात में देर तक बैठी रही। यह कहा गया कि उच्चतम न्यायालय ने इन दोनों सज्जनों के जमानत संबंधी अवेदन पर विचार करने में जो चिंता दिखाई है, वही चिंता ऐसे सभी मामलों में जिनमें नागरिकों की, चाहे वे उच्च श्रेणी के हों या निम्न श्रेणी के, स्वाधीनता से संबंधित प्रश्न उत्पन्न हुए हों, इस न्यायालय के रुख और उसके रुझान में भी अवश्य ही प्रकट होनी चाहिए और यह कि निर्धन लोगों के जमानत संबंधी आवेदनों को वही महत्व मिलना चाहिए जो कि बड़े उद्योगपतियों के जमानत संबंधी आवेदनों को मिलता है। अतः याची की प्रार्थना यह है कि जमानत या अग्रिम जमानत देने या देने से इनकार करने वाले आदेशों के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिकाओं पर उच्चतम न्यायालय को उसी रीति से तुरंत कार्यवाही करनी चाहिए, जिस रीति से इन दो बड़े-बड़े उद्योगपतियों की विशेष याचिका पर इस न्यायालय ने विचार किया है। याचिका का निपटारा तदनुसार करते हुए,

अभिनिर्धारित—अब यह बात बताई जा सकती है कि जहां तक कि उच्चतम न्यायालय का संबंध है, निर्धन लोगों की विशेष याचिकायें विचार किए जाने की उतनी ही हकदार हैं जितनी कि बड़े उद्योगपतियों की विशेष इजाजत याचिकाएं होती हैं। वास्तव में, इस न्यायालय ने गरीब और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों के संबंध में सदैव यह माना है कि वे धनी और संपन्न व्यक्तियों, व्यापारियों और उद्योगपतियों की बनिस्बत, विचार किए जाने की दृष्टि से, अधिमानता दिए जाने के हकदार हैं। कारण यह है कि भारतीय समुदाय के कमजोर वर्गों को लंबे समय से और अनेक वर्षों से न्याय पाने से वंचित रखा गया है : गरीबी, अज्ञान और निरक्षरता के कारण न्याय तक उनकी पहुंच नहीं हो सकी थी। वे संविधान और विधि द्वारा उन्हें प्रदत्त अधिकारों और फायदों से अवगत नहीं हैं। सामाजिक और आर्थिक रूप से प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित स्थिति में होने के कारण उनमें अपने अधिकारों का प्राख्यान करने की क्षमता नहीं है और उनके पास ऐसे भौतिक साधन भी नहीं हैं जिसकी सहायता से वे अपने सामाजिक और आर्थिक हितों को प्रवृत्त करा सकें और शोषण तथा अन्याय का मुकाबला कर सकें। इस न्यायालय ने लोकहितार्थ मुकदमों की रणनीति इस दृष्टि से विकसित की थी जिससे कि न्याय समुदाय के निर्धन, प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों की सहज पहुंच के भीतर आ जाए। इस न्यायालय ने सदैव इस देश के लोगों की बहुत बड़ी संख्या के कल्याण के लिए सर्वाधिक फिक्र और चिंता दर्शित की है जो कि अभाव और दारिद्रय, दुख और कष्ट का जीवन जी रहे हैं और इस देश में लाखों लोगों की आशाओं के प्रतीक हो गए हैं। अतः यह कहना सही नहीं है कि उच्चतम न्यायालय निर्धन लोगों के साथ वही व्यवहार नहीं कर रहा है जो वह बड़े उद्योगपतियों के साथ करता है। वास्तव में निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों के प्रति जो चिंता है, वह धनी और संपन्न व्यक्तियों के प्रति दर्शित की गई चिंता से कहीं अधिक है, क्योंकि पश्चात्कथित, अपनी मुख्य सामाजिक और आर्थिक स्थिति के कारण और बहुत बड़े भौतिक साधनों के कारण अपने अधिकारों पर किए जाने वाले किसी भी आक्रमण का प्रतिरोध कर सकते हैं, जबकि निर्धन

और धन से वंचित लोगों के पास प्रतिरोध करने और उसके विरुद्ध लड़ने की न तो क्षमता होती है और न ही इच्छा। (पैरा 2)

यह प्रश्न कि क्या जमानत या अग्रिम जमानत देने से इनकार करने के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिकाएं तुरंत सूचीबद्ध की जानी चाहिएं या नहीं, मुख्य न्यायमूर्ति की प्रशासनिक अधिकारिता के भीतर का प्रश्न है और न्यायालय उस निमित्त कोई भी निदेश नहीं दे सकता, किंतु यह बताया जा सकता है कि ऐसा हरेक याची को जो जमानत या अग्रिम जमानत देने से इनकार करने के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका फाइल करता है, विद्वान् मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष उनकी प्रशासनिक हैसियत से, अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध करने के लिए अपने मामले का उल्लेख करने का अवसर होता है और जब कभी भी कोई मामला अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध किए जाने के लायक होता है, तब मुख्य न्यायमूर्ति अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध करने के लिए आवश्यक आदेश करते हैं, तथापि यह बात बताई जा सकती है कि इस न्यायालय का आशय उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय या मजिस्ट्रेटों द्वारा किए गए आदेशों के विरुद्ध नियमित अपील न्यायालय होना कभी भी नहीं था। इस साधारण अधिकारिता का लाभ शीर्ष न्यायालय उचित न्याय की घोर हत्या बचाने के प्रयोजनार्थ ही कर सकता है, किंतु ऐसे मामले अपनी प्रकृति की दृष्टि से बहुत ही आपवादिक होंगे। ऐसे प्रत्येक मामले में ही जहां कि शीर्ष न्यायालय यह पाता है कि कुछ अन्याय किया गया है, विशेष इजाज़त नहीं देगा और हस्तक्षेप नहीं करेगा। उससे शीर्ष न्यायालय नियमित अपील न्यायालय में संपरिवर्तित हो जाएगा और इसके अलावा ऐसा करने से शीर्ष न्यायालय जल्दी ही ऐसी स्थिति में पहुंच जाएगा, जहां कि मामलों के अत्यधिक बकाया होने के कारण जो कि इकट्ठा होना अधिसंभावी है, किसी अन्याय का उपचार करने में अपने आपको असमर्थ पाएगा। इस न्यायालय को यह अवश्य ही महसूस करना चाहिए कि अधिकांश मामलों में उच्च न्यायालयों को अंतिम न्यायालय होना चाहिए, भले ही वे गलत क्यों न हों। शीर्ष न्यायालय कभी-कभी गलत हो सकता है किंतु चूंकि उसके आगे और कोई अपील नहीं है, इसलिए जो कुछ शीर्ष न्यायालय कहता है, वह अंतिम हो जाता है। 'उच्चतम न्यायालय इसलिए ठीक है, क्योंकि वह अंतिम है; वह अंतिम इसलिए नहीं है क्योंकि वह ठीक है।' वस्तुतः उच्चमत न्यायालय को जमानत या अग्रिम जमानत देने से या देने से इनकार करने संबंधी आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और यह कि ऐसे मामले हैं, जिनमें उच्च न्यायालय को प्रसामान्यतः अंतिम प्राधिकरण होना चाहिए। अतः मामूली तौर से उच्चतम न्यायालय को, आपवादिक मामलों में हस्तक्षेप करने के सिवाय, जमानत या अग्रिम जमानत देने या देने से इनकार करने से संबंधित आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि ये ऐसे मामले हैं, जिनमें उच्च न्यायालय को प्रसामान्यतः अंतिम निर्णयकर्ता होना चाहिए। (पैरा 3)

अनुसरित निर्णय

		पैरा
[1985]	*1985 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं० 2938 जो 30-10-85 को विनिश्चित की गई : **प्रह्लाद अग्रवाल** बनाम **असम राज्य**	3

*यह निर्णय अप्रतिवेदित है [सम्पादक].

आरंभिक अधिकारिता : 1986 की रिट याचिका (दांडिक) सं० 540.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट याचिका।

याची की ओर से श्री जय नारायण, याची स्वयं भी

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती ने दिया।

मुख्य न्यायमूर्ति भगवती—यह रिट याचिका बिहार लीगल सपोर्ट सोसायटी द्वारा फाइल की गई है जोकि रजिस्ट्रीकृत सोसायटी है, और जिसका अपना मुख्य लक्ष्य और उद्देश्य समुदाय के निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित वर्गों को विधिक सहायता देने की व्यवस्था करना है जिससे कि वे विधि की प्रक्रिया के माध्यम से अपने सांविधानिक और विधिक अधिकारों की लड़ाई में उनकी सहायता की जा सके। यह बात कि रिट याचिका फाइल करने का अवसर क्यों आया, पैरा 2 में उपवर्णित है जिसमें यह कहा गया है कि इस न्यायालय की न्यायपीठ श्री ललित मोहन थापर और श्री श्याम सुन्दर लाल की जमानत संबंधी आवेदन पर विचार करने के लिए 5 सितंबर, 1986 की रात में देर तक बैठी रही और यह कि इस न्यायालय ने इन दोनों सज्जनों के जमानत संबंधी आवेदन पर विचार करने में जो चिंता दिखाई थी, वही चिंता ऐसे सभी मामलों में जिनमें नागरिकों की, चाहे वे उच्च श्रेणी के हों या निम्न श्रेणी के, स्वाधीनता से संबंधित प्रश्न उत्पन्न हुए हों, इस न्यायालय के रुख और उसके रुझान में भी अवश्य ही प्रकट होनी चाहिए और यह कि निर्धन लोगों के जमानत संबंधी आवेदनों को वही महत्व मिलना चाहिए जोकि बड़े उद्योगपतियों के जमानत संबंधी आवेदनों को मिलता है। अतः याची की प्रार्थना यह है कि जमानत या अग्रिम जमानत देने या देने से इंनार करने वाले आदेशों के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिकाओं पर इस न्यायालय को उसी रीति से तुरंत कार्यवाही करनी चाहिए, जिस रीति से इन दो बड़े-बड़े उद्योगपतियों की विशेष इजाजत याचिका पर इस न्यायालय ने विचार किया है।

2. अब हम यह बात बता सकते हैं कि जहां तक कि इस न्यायालय का संबंध है, निर्धन लोगों की विशेष याचिकाएं विचार किए जाने की उतनी ही हकदार हैं जितनी कि बड़े उद्योगपतियों की विशेष इजाजत याचिकाएं होती हैं। वास्तव में, इस न्यायालय ने गरीब और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों के संबंध में सदैव यह माना है कि वे धनी और संपन्न, व्यक्तियों, व्यापारियों और उद्योगपतियों की बनिस्बत विचार किए जाने की दृष्टि से अधिमानता दिए जाने के हकदार हैं। कारण यह है कि भारतीय समुदाय के कमजोर वर्गों को लंबे समय से और अनेक वर्षों से न्याय पाने से वंचित रखा गया है : गरीबी, अज्ञान और निरक्षरता के कारण न्याय तक उनकी पहुंच नहीं हो सकी थी। वे संविधान और विधि द्वारा उन्हें प्रदत्त अधिकारों और फायदों से अवगत नहीं हैं। सामाजिक और आर्थिक रूप से प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित स्थिति में होने के कारण उनमें अपने अधिकारों का प्राख्यान करने की क्षमता नहीं है और उनके पास ऐसे भौतिक साधन भी नहीं हैं जिनकी सहायता से वे अपने सामाजिक और आर्थिक हितों को प्रवृत्त करा सकें और शोषण तथा अन्याय का मुकाबला कर सकें। हमारे देश के अधिकांश लोगों को न्याय की पहुंच से वंचित रखा गया है और वे, निराशा और असहायता से पीड़ित होकर ऐसे शोषक समाज के शिकार बने रहते हैं; जिसमें

आर्थिक शक्ति कुछ लोगों के हाथों में केंद्रित है और उसका उपयोग मनुष्यों की बहुत बड़ी जनसंख्या पर अपना शाश्वत् प्रभुत्व बनाए रखने के लिए किया जाता है। अतः इस न्यायालय ने उसे सदैव अपना यह कर्तव्य माना है कि वह भारतीय समुदाय के इन वंचित और निर्धन लोगों को सुरक्षा प्रदान करे जिससे कि उन्हें अपने सामाजिक और आर्थिक हक समझने में सहायता मिल सके तथा उनके दमन और शोषण का अंत हो सके। इस न्यायालय ने लोक-हितार्थ मुकदमों की रणनीति इस दृष्टि से विकसित की थी जिससे कि न्याय समुदाय के निर्धन, प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों की सहज पहुंच के भीतर आ जाए। इस न्यायालय ने सदैव इस देश के लोगों की बहुत बड़ी संख्या के कल्याण के लिए सर्वाधिक फिक्र और चिंता दर्शित की है जोकि अभाव और दारिद्रय, दुख और कष्ट का जीवन जी रहे हैं और इस देश में लाखों लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं के प्रतीक हो गए हैं। अतः यह कहना सही नहीं है कि यह न्यायालय निर्धन लोगों के साथ वही व्यवहार नहीं कर रहा है जो वह बड़े उद्योगपतियों के साथ करता है। वास्तव में निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित लोगों के प्रति जो चिंता है, वह धनी और संपन्न व्यक्तियों के प्रति दर्शित की गई चिंता से कहीं अधिक है क्योंकि पश्चात्कथित, अपनी मुख्य सामाजिक और आर्थिक स्थिति के कारण और बहुत बड़े भौतिक साधनों के कारण अपने अधिकारों पर किए जाने वाले किसी भी आक्रमण का प्रतिरोध कर सकते हैं, जबकि निर्धन और धन से वंचित लोगों के पास प्रतिरोध करने और उसके विरुद्ध लड़ने की न तो क्षमता होती है और न ही इच्छा।

3. यह प्रश्न कि क्या जमानत या अग्रिम जमानत देने से इनकार करने के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिकाएं तुरंत सूचीबद्ध की जानी चाहिएं या नहीं, मुख्य न्यायमूर्ति की प्रशासनिक अधिकारिता के भीतर का प्रश्न है और हम उस निमित्त कोई भी निदेश नहीं दे सकते किंतु हम यह बता सकते हैं कि ऐसा हरेक याची को जो जमानत या अग्रिम जमानत देने से इंकार करने के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका फाइल करता है, विद्वान् मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष, उनकी प्रशासनिक हैसियत से, अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध करने के लिए अपने मामले का उल्लेख करने का अवसर होता है और जब कभी भी कोई मामला अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध किए जाने के लायक होता है, तब मुख्य न्यायमूर्ति अत्यावश्यक रूप से सूचीबद्ध करने के लिए आवश्यक आदेश करते हैं, तथापि यह बात बताई जा सकती है कि इस न्यायालय का आशय उच्च न्यायालय या सेशन न्यायालय या मजिस्ट्रेटों द्वारा किए गए आदेशों के विरुद्ध नियमित अपील न्यायालय होना कभी भी नहीं था। उसे समस्त देश के लिए विधि अधिकथित करने के प्रयोजनार्थ शीर्ष न्यायालय के रूप में सृष्ट किया गया था और विशेष इजाजत देने के लिए असाधारण अधिकारिता संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन उसे प्रदत्त की गई थी जिससे कि वह उस समय हस्तक्षेप कर सके जबकि वह यह पाए कि निचले न्यायालयों या अधिकरणों ने विधि का प्रतिपादन ठीक तौर से नहीं किया है और उस विषय के संबंध में सही विधि घोषित करना आवश्यक है। इस असाधारण अधिकारिता का लाभ शीर्ष न्यायालय उचित न्याय की घोर हत्या बचाने के प्रयोजनार्थ ही कर सकता है, किंतु ऐसे मामले अपनी प्रकृति की दृष्टि से बहुत ही आपवादिक होंगे। ऐसे प्रत्येक मामले में ही जहां कि शीर्ष न्यायालय यह पाता है कि कुछ अन्याय किया गया है, विशेष इजाजत नहीं देगा और हस्तक्षेप नहीं करेगा। उससे शीर्ष न्यायालय नियमित अपील न्यायालय में संपरिवर्तित हो जाएगा और इसके अलावा ऐसे करने से शीर्ष न्यायालय

जल्दी ही ऐसी स्थिति में पहुंच जाएगा, जहां कि मामलों के अत्यधिक बकाया होने के कारण जो कि इकट्ठा होना अधिसंभावी है, किसी अन्याय का उपचार करने में अपने आपको असमर्थ पाएगा। हमें, यह अवश्य ही महसूस करना चाहिए कि अधिकांश मामलों में उच्च न्यायालयों को अंतिम न्यायालय होना चाहिए भले ही वे गलत क्यों न हों। शीर्ष न्यायालय कभी-कभी गलत हो सकता है किंतु चूंकि उसके आगे और कोई अपील नहीं है, इसलिए जो कुछ शीर्ष न्यायालय कहता है, वह अंतिम हो जाता है। यही कारण है कि अमरीकी न्यायाधीश ने यूनाइटेड स्टेट्स के सुप्रीम कोर्ट की बाबत यह कहा था कि "हम इसलिए ठीक हैं क्योंकि हम अंतिम हैं। हम अंतिम इसलिए नहीं हैं क्योंकि हम ठीक हैं।" अतः हमें इस विचार के साथ अपने आप ही सामंजस्य स्थापित कर लेना चाहिए कि शीर्ष न्यायालय की भांति जोकि कभी-कभी गलत हो सकता है, उच्च न्यायालय भी गलत हो सकते हैं और उच्च न्यायालय की प्रत्येक गलती को शीर्ष न्यायालय कदाचित ठीक नहीं कर सकता। हम ऐसा समझते हैं कि राष्ट्रीय अपील न्यायालय स्थापित करना वांछनीय होगा जोकि देश के उच्च न्यायालयों और अधिकरणों के, सिविल, दांडिक, राजस्व और श्रम के मामलों किए गए विनिश्चयों के विरुद्ध विशेष इजाज़त से अपील ग्रहण करने की स्थिति में होगा और जहां तक कि वर्तमान शीर्ष न्यायालय का संबंध है, वहां तक उसका संबंध केवल ऐसे मामलों में को ग्रहण करने से होना चाहिए, जिनमें सांविधानिक विधि और लोक विधि के प्रश्न अंतर्ग्रस्त हैं। किंतु जब तक कि नीति संबंधी ऐसे विनिश्चय सरकार द्वारा अनुमोदित न कर दिए जाएं, तब तक शीर्ष न्यायालय को मामलों के ऐसे सीमित वर्ग में हस्तक्षेप करना चाहिए, जिनमें विधि संबंधी ऐसा सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त होता है, जिसे अंतिम रूप से शीर्ष न्यायालय द्वारा समस्त देश के लिए अंतिम रूप से अधिकथित करना होता है या जिनमें न्याय की गंभीर, घोर और क्रूर हत्या हुई है। कभी-कभी हम न्यायधीशगण यह महसूस करते हैं कि जब कोई मामला हमारे समक्ष आता है और हम यह पाते हैं कि अन्याय किया गया है, तो हम अपनी आंख किस प्रकार बंद कर सकते हैं। इस कष्टदायी प्रश्न का उत्तर यह है कि शीर्ष न्यायालय के न्यायाधीश, न्याय के प्रति अपनी आंखें नहीं बंद कर सकते किंतु उन्हें अपनी आंखें समान रूप से पूरी तरह से खुली रखनी चाहिएं, अन्यथा शीर्ष न्यायालय ऐसा उच्च और श्रेष्ठ भूमिका निभाने में समर्थ नहीं होगा जिसकी बाबत यह आशय था कि वह संविधान के निर्माताओं के विश्वास के अनुसार कार्य करेगा। इसी कारण से शीर्ष न्यायालय ने, आत्मानुशासन के तौर पर, ऐसे मामलों में जिनमें विशेष इजाज़त याचिका जमानत या अग्रिम जमानत देने या देने से इंकार करने के आदेशों के विरुद्ध फाइल की गई हैं, अपने विवेक का प्रयोग करते हुए उसका मार्गदर्शन करने के लिए कतिपय मानक विकसित किए हैं। इन मानकों को स्पष्ट शब्दों में इसलिए व्यक्त करना पड़ेगा कि लोग इस बारे में जान सकें कि ऐसी विशेष इजाजत याचिकाओं को ग्रहण करने में शीर्ष न्यायालय की न्यायिक नीति क्या है। उससे ऐसी विशेष इज़ाजत याचिकाओं के न्यायिक उत्तर स्वरूप निश्चतता का उपाय आरंभ करने में बहुत सहायता मिलेगी और उसके परिणामस्वरूप ऐसी विशेष इज़ाजत याचिकाओं के फाइल करने में भी कुछ कमी हो जाएगी। यही कारण था कि इस न्यायालय की न्यायपीठ में जिसमें हम दो, मुख्य न्यायमूर्ति और न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र थे, 1985 की विशेष इजाजत याचिका (दांडिक) सं० 2938 में 30 अक्तूबर, 1985[1] को किए गए आदश

[1] (1985) 1985 की विशेष इजाज़त याचिका (दांडिक) सं० 2939 जो 30-10-65 को विनिश्चित की गई।

1986(11) eILR(PAT) SC 1

में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया था कि इस न्यायालय को जमानत या अग्रिम जमानत देने से या देने से इंकार करने संबंधी आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और यह कि ऐसे मामले हैं, जिनमें उच्च न्यायालय को प्रसामान्यतः अंतिम प्राधिकरण होना चाहिए। हम इस न्यायालय की न्यायपीठ द्वारा अधिकथित नीति संबंधी इस सिद्धांत को दोहराते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि मामूली तौर से इस न्यायालय को, आपवादिक मामलों में हस्तक्षेप करने के सिवाय, जमानत या अग्रिम जमानत देने या देने से इंकार करने से संबंधित आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, क्योंकि ये ऐसे मामले हैं, जिनमें उच्च न्यायालय को प्रसामान्यतः अंतिम निर्णयकर्ता होना चाहिए।

4. ऊपर बताई गई बातों के अनुसार इस रिट याचिका का निपटारा हो जाएगा। याची द्वारा निर्धन और प्रतिकूल-व्यवस्था-पीड़ित व्यक्तियों के लिए यह लोकहितार्थ मुकदमा लाने में जो चिंता और फिक्र दर्शित की गई है, उसकी हम प्रशंसा करते हैं।

याचिका का निपटारा तदनुसार किया गया।

श्री०